एक नई शुरुआत

वीणा शिवपुरी

महाराष्ट्र में एक छोटा-सा गांव था। भारत के अन्य लाखों गांवों जैसा। लोग छोटे-मोटे धंधे करते थे। थोड़ी-बहुत खेती-बाड़ी थी। हर जगह की तरह वहां की औरते खूब मेहनती थीं। घर और बच्चे संभालती। दूर से पानी, लकड़ी, चारा ढोकर लातीं। जानवरों की देखभाल करतीं। इस सबके बाद खेती-बाड़ी या दूसरे धंधों में भी हाथ बंटाती।

शाम ढले मर्द कच्ची शराब पीकर आते और बीवी-बच्चों के साथ मार-पीट करते। वे बेचारी औरतें उसे भी काम समझ कर सहतीं। अगले दिन फिर वही ढर्रा शुरू हो जाता। सुबह से शाम तक कमरतोड़ मेहनत, फिर मार-पीट, गाली-गलौज।

गांव में आई नई बहू

गांव के प्रधान के बेटे की शादी हुई। पास के शहर से पढ़ी-लिखी बहू आई। यह गांव के लिए अजूबा बात थी। उस गांव में लड़कियों को पढ़ाने का रिवाज नहीं था। गांव में स्कूल था लेकिन वहां लड़के ही जाते थे। लड़कियों को तो दूसरी-तीसरी कक्षा तक पढ़ाकर घर बिठा लिया जाता था।

प्रधान जी की बहू शोभा तो फर-फर किताब पढ़ती थी। रोज़ शहर से आने वाला समाचार-पत्र बांचती। जब गांव की बाकी औरतों के साथ कुंए पर या नदी पर मिलती तो उन्हें नई-नई बातें सुनाती। ख़बरे बताती। थोड़े ही दिनों में उसने गांव की सभी औरतों का मन मोह लिया।

पहले जो औरतें नाक सिकोड़ कर उसकी पढ़ाई-लिखाई की बुराई करती थीं, वे भी अब उसकी तारीफ करने लगीं।

शोभा ने की नई शुरुआत

एक दिन शोभा ने सबको सुझाव दिया। क्यों न हम रोज़ कहीं थोड़ी देर के लिए मिल बैठें। अपने दुख-सुख बांटें। कुछ आपबीती, कुछ जगबीती सुनें और सुनाएं।

एक औरत बोली—"हमारे पास समय कहां है? रात-दिन तो काम में खटती रहती हैं।"

दूसरी औरत बोली—"अब भी तो हम बतियाने के लिए समय निकाल ही लेती हैं। कभी कुंए पर, कभी नदी पर तो कभी जंगल में।"

तीसरी औरत ने सुझाव दिया—"दोपहर में जब हम टोकरियां बुनती हैं तब क्यों न मिल कर बैठें। काम भी करेंगी और बातें भी।"

यह बात सबको समझ में आ गई।

चल निकली औरतों की बैठक

अगले ही दिन से दोपहर में औरतों की बैठक जमने लगी। शोभा पत्र-पत्रिकाओं में से पढ़कर खबरें सुनाती। कभी कहानियां तो कभी कविताएं पढ़ती। कभी-कभी सब मिलकर गीत गातीं। अपने मन की एक दूसरे से कहतीं।

धीरे-धीरे सबको लगने लगा कि हम इतनी मेहनत करती हैं फिर भी बच्चों का पेट नहीं भर

पातीं। मर्द कमाई का बड़ा हिस्सा शराब में उड़ा देते हैं। ऊपर से मार-पीट अलग। सब औरतों में अपने सम्मान का अहसास पैदा होने लगा।

रोज एक नया दुख

किसी दिन किसी औरत के माथे पर पट्टी बंधी होती तो किसी दिन किसी का मुंह सूजा, होंठ कटे हुए। सब औरतें आपस में मिलकर हल्दी चूना लगातीं। किसी के घर अनाज न हो तो मिलकर एक-एक कटोरी अनाज इकट्ठा करतीं। इस तरह उनमें पैदा हुई एकता और मदद की भावना।

उनके साझे दुखों ने उन्हें एक-दूसरे के करीब ला दिया। शोभा उन्हें दूसरी औरतों के अनुभव भी सुनाती थी। कैसे उन्होंने अपनी लड़ाइयां लड़ीं। किस तरह से तकलीफों का सामना करने का रास्ता ढूंढा। कई बार वे सब आपस में कहतीं—'जब ये औरतें यह सब कर पाई तो हम क्यों नहीं कर सकतीं?'

मौका मिला

हमेशा की तरह एक दिन रात को एक झोंपड़ी से चीख पुकार उठी। सावित्री चिल्ला रही थी—

"अरे कोई बचाओ। यह मुझे मार देगा।"

हर औरत कसमसा रही थी लेकिन बाहर निकलने की हिम्मत न थी। कुछ ने अपने पतियों से कहा भी कि देखो तो सही क्या हो रहा है? मर्दों ने घुड़क दिया—

"हमें क्या? उसका मर्द है, मर्जी आए जो करे। अपनी औरत को नहीं मारेगा तो क्या पराई औरत को मारेगा।"

सुबह मर्दों के घर से निकलते ही औरतें सावित्री की झोंपड़ी में पहुंची। सावित्री बेसुध पड़ी थी। शरीर पर जगह-जगह नील पड़े हुए थे। उसके कपड़े खून से लथपथ थे। सावित्री का तीन महीने का गर्भ गिर गया था। जल्दी से दाई को बुलाया। उसकी सार-संभाल की। कुछ देर और अगर यूं ही पड़ी रहती तो बेचारी मर ही जाती।

अब न सहेंगी

हर औरत के मन में एक ही बात थी—बस, अब न सहेंगी। हम क्या इंसान नहीं हैं। ऐसा अनादर, ऐसा अत्याचार अब बर्दाश्त नहीं करेंगी। सबने मिलकर वहीं बैठक की और फ़ैसला ले लिया।

सब औरतों ने चूल्हे की हड़ताल कर दी। पूरे गांव में खाना नहीं पका। दोपहर में मर्दों को खेतों में खाना नहीं पहुंचा। शाम पड़े घर लौटे तो देखा चूल्हा बुझा पड़ा है। हर औरत ने अपने पति से कह दिया। तुम्हारी जो मर्जी है करो, चूल्हा नहीं जलेगा। चूंकि औरतें एक थीं, आपस में जुड़ी थीं, उनमें ताक़त थी।

एक दिन बीता। दो दिन बीते। अब तो मर्दों में खलबली मच गई। दो चार ने अपनी औरतों को मारा-पीटा, लेकिन चूल्हा फिर भी नहीं जला। सब पहुंचे प्रधान जी के पास। पंचायत बैठी। औरतों ने अपनी मांग सामने रखी।

हमारे ऊपर हाथ नहीं उठाया जाएगा।

सावित्री के मर्द ने पंचायत के सामने कानों को हाथ लगा कर माफ़ी मांगी।

सब मर्दों ने वचन दिया कि मार-पीट नहीं करेंगे।

अगले दिन अपनी बैठक में सब औरतें खूब खुश थीं। उन्हें मालूम हो गया था कि एक होकर वे अपने हक़ पा सकती हैं। सबने एक दूसरे के गले लग कर बधाई दी। खुशी के आंसू पोंछे।

पता नहीं मर्दों ने कितने दिन अपना वचन निभाया। लेकिन औरतों ने शुरुआत तो की। □